पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2014 की आपराधिक विविध सं. 48680

थाना कांड सं.-557 वर्ष-2012 थाना- नवादा जिला- नवादा से उद्भूत।

==

संजय कुमार सिंह, पिता- त्रिवेणी सिंह, निवासी- मोहल्ला- न्यू एरिया प्रोपराइटर टी. के. ऑटोमाइबिल (डीलर स्वराज ट्रैक्टर), थाना- नवादा शहर जिला- नवादा।

....याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

1. बिहार राज्य
2. अनिल सिंह, पिता- राम शरण सिंह, निवासी- मोहल्ला- कुलमा थाना- अकबरपुर नवादा, वर्तमान में न्यू एरिया थाना- नवादा शहर, जिला- नवादा में रह रहे हैं।
3. शंभू सिंह, पिता- राम शरण सिंह, निवासी- मोहल्ला- कुलमा थाना-अकबरपुर नवादा, वर्तमान में-न्यू एरिया थाना- नवादा शहर, जिला-नवादा में रह रहे हैं।
4. सुरेंद्र सिंह, पिता- राम शरण सिंह, निवासी- मोहल्ला- कुलमा थाना- अकबरपुर नवादा, वर्तमान में- न्यू एरिया थाना- नवादा शहर, जिला-नवाद में रहते हैं।
5. दिवाकर सिंह, पिता- शंभू सिंह, निवासी- मोहल्ला- कुलमा थाना- अकबरपुर नवादा, वर्तमान में न्यू एरिया थाना- नवादा शहर, जिला-नवादा में रह रहे हैं।
6. शिवन सिंह, पिता- उमेश सिंह, निवासी- डुमरावां थाना- पकारी वासवां जिला- नवादा, वर्तमान में- न्यू एरिया, नवादा में विनय सिंह के घर में रहते हैं।
7. उमेश सिंह, पिता- स्वर्गीय रामचंद्र सिंह, निवासी- डुमरावां थाना- पकारी वासवां जिला-नवादा, वर्तमान में- न्यू एरिया, नवादा में विनय सिंह के घर में रहते हैं।
8. उदय सिंह, पिता- राम ओतर सिंह, निवासी- गाँव- लोकमोहन थाना- अकबरपुर, जिला-नवादा।

9. चुन चुन सिंह, पिता- उदय सिंह, निवासी- गाँव- लोकमोहन थाना- अकबरपुर, जिला- नवादा, वर्तमान में न्यू एरिया, नवादा जिला- नवादा में रह रहे हैं।

10. रामानुज सिंह, पिता- लाल नारायण सिंह, निवासी- गाँव- बेढौना थाना- हिसुआ, जिला-नवादा, वर्तमान में चौरसिया कॉलेज के पीछे रहते हैं।

11. अजय सिंह, पिता- श्रीकांत सिंह, निवासी- गाँव- होसुत, थाना- पाकरी वासवान, वर्तमान में न्यू एरिया, नवादा, जिला- नवादा में रह रहे हैं।

....विपक्षी पक्ष/गण

==

उपस्थिति :

याचिकाकर्ता/ओं के लिए:	श्री संजय कुमार, अधिवक्ता
	श्री सुमन कुमार,अधिवक्ता
विपक्षी संख्या 2 से 11 के लिए:	श्री हंस राज, अधिवक्ता
राज्य के लिए:	श्री बिनोद कुमार सं. 3, सहायक लोक अभियोजक

==

अधिनियम/धाराएं:

- *भारतीय दंड संहिता की धारा 147, 148, 149, 448, 379, 435, 436, 427, 307*
- *शस्त्र अधिनियम की धारा 27*

संदर्भित वाद:

- *भगवंत सिंह बनाम पुलिस आयुक्त और अन्य (1985) 2 एससीसी 537 में प्रकाशित किया गया*
- *धर्म पाल और अन्य बनाम हरियाणा राज्य और अन्य (2014) 3 एससीसी 306 में प्रकाशित किया गया*

- *विष्णु कुमार तिवारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य सचिव गृह सिविल सचिवालय लखनऊ के माध्यम से और अन्य (2019) 8 एससीसी 27 में प्रकाशित किया गया*
- *अमीश देवगन बनाम भारत संघ और अन्य (2021) 1 एससीसी 1 में प्रकाशित किया गया*

याचिका: यह याचिका उस आदेश को रद्द करने के लिए दायर की गई थी, जिसके तहत मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने पुलिस द्वारा आरोपियों को क्लीन चिट देते हुए दाखिल की गई अंतिम प्रकाशित को स्वीकार कर लिया।

प्रस्तुत मामला हत्या के प्रयास, दंगा, आगजनी द्वारा शरारत, आग्नेयास्त्र का प्रयोग, कई मोटरसाइकिलों और ट्रैक्टरों को क्षति पहुँचाने, तथा मोबाइल फोन चोरी करने से संबंधित है।

निर्णय: सूचक ने दो विरोध याचिकाएं दाखिल की थीं—एक जांच के दौरान और दूसरी, पुलिस प्रकाशित दाखिल होने के बाद। यह विधिसम्मत स्थिति है कि विरोध याचिका दायर होने की स्थिति में दंडाधिकारी को सूचक द्वारा उसमें उठाए गए तर्कों और तथ्यों पर विचार करना आवश्यक होता है। ऐसी याचिका पर दंडाधिकारी उसे खारिज कर सकता है, शिकायत मानकर कार्यवाही आगे बढ़ा सकता है, केस डायरी में उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर संज्ञान ले सकता है, या पुनः जांच का आदेश दे सकता है। लेकिन वर्तमान मामले में दंडाधिकारी ने सूचक द्वारा दायर विरोध याचिका पर कोई विचार किए बिना ही पुलिस प्रकाशित को स्वीकार कर लिया, जो कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थापित विधिक सिद्धांतों का स्पष्ट उल्लंघन है। (अनुच्छेद 6)

दंडाधिकारी द्वारा सूचक को यह भी सूचित नहीं किया गया कि पुलिस ने आरोपियों को चार्जशीट में शामिल नहीं किया है। यह प्रक्रिया न्यायसंगत नहीं मानी जा सकती। (अनुच्छेद 6)

निर्देश: दंडाधिकारी को निर्देशित किया जाता है कि वह याचिकाकर्ता को उसके विरोध याचिका पर पर्याप्त सुनवाई का अवसर प्रदान कर, उसके पश्चात आरोपियों के संबंध में एक नया, उपयुक्त एवं कारणसहित आदेश पारित करें। (अनुच्छेद 6)

याचिका स्वीकार की जाती है। (अनुच्छेद 7)

==

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==

गणपूर्ति: माननीय न्यायमूर्ति श्री शैलेंद्र सिंह

मौखिक निर्णय

दिनांक: 25-03-2025

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री संजय कुमार, विपक्षी सं. 2 से 11 के विद्वान अधिवक्ता श्री हंस राज और राज्य के लिए विद्वान सहायक लोक अभियोजक श्री विनोद कुमार सं.3 को सुना।

2. यह याचिका दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'सीआरपीसी') की धारा 482 के तहत दायर की गई है, जिसमें विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी , नवादा की अदालत द्वारा दिनांक 25.07.2014 को पारित आदेश को रद्द करने की प्रार्थना की गई है, जो नगर पीएस केस संख्या 557/2012 दिनांक 18.10.2012 के संबंध में भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में 'आईपीसी') की धाराओं 147, 148, 149, 448, 379, 435, 436, 427, 307 और शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत दर्ज अपराधों के लिए दर्ज किया गया था, जिसके तहत विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, नवादा ने पुलिस द्वारा विपक्षी संख्या 2 से 11 को दोषमुक्त करते हुए अंतिम प्रपत्र स्वीकार कर लिया था।

3. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री संजय कुमार ने प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामला आगजनी, हत्या का प्रयास, दंगा, आग्नेयास्त्र का प्रयोग करके की

गई शरारत तथा कई मोटरसाइकिलों और ट्रैक्टरों को नष्ट करने के साथ-साथ कई मोबाइल फोन आदि चुराने जैसे गंभीर अपराधों से संबंधित है। विपक्षी संख्या 2 से 11 का नाम प्राथमिकी में दर्ज है तथा उक्त विपक्षी सहित कुल बीस आरोपियों का नाम सुचक द्वारा उक्त प्राथमिकी में दर्ज किया गया है। विपक्षी संख्या 2 से 11 ने कथित अपराधों में सक्रिय रूप से भाग लिया तथा महत्वपूर्ण गवाहों, जिनमें सुचक भी शामिल है, जिनका विवरण प्राथमिकी में दिया गया है, ने पूरी घटना को देखा था, की जांच जांच अधिकारी द्वारा की गई, जिसमें विपक्षी संख्या 2 से 11 की घटना स्थल पर उपस्थिति तथा सह-आरोपियों के साथ संलिप्तता का पता चला। प्राथमिकी में नामजद दस आरोपियों को मौके पर ही गिरफ्तार कर लिया गया और पुलिस ने उनके खिलाफ आरोप पत्र दाखिल कर दिया, लेकिन उन्हें गिरफ्तार न करके ओपी नंबर 2 से 11 को दोषमुक्त कर दिया, जबकि वे कथित घटना में समान रूप से शामिल थे और उनके नाम प्राथमिकी में दर्ज हैं और जिन महत्वपूर्ण गवाहों ने घटना को देखने का दावा किया है, उन्होंने प्राथमिकी में ओपी के खिलाफ लगाए गए आरोपों का पूरी तरह से समर्थन किया है। पुलिस ने मुख्य रूप से कुछ गवाहों के बयानों पर भरोसा किया, जिनके बारे में कहा जाता है कि वे स्वतंत्र व्यक्ति हैं, लेकिन उनके द्वारा दावा किए गए घटनास्थल पर उनकी मौजूदगी पूरी तरह से संदिग्ध है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि जांच के दौरान, याचिकाकर्ता ने नामित अभियुक्तों के खिलाफ कार्रवाई न करने के कारण दिनांक 09.11.2012 को विरोध याचिका दायर की थी और पुलिस रिपोर्ट 28.02.2014 को दायर की गई थी, जिसमें मौके पर पकड़े गए सह-अभियुक्तों को आरोप पत्र दिया गया था और विपक्षी संख्या 2 से 11 नहीं भेजी गई थी, लेकिन इससे पहले, याचिकाकर्ता ने अपनी विरोध याचिका दायर की थी और पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत होने के बाद उसने विपक्षी संख्या 2 से 11 नहीं भेजने के पुलिस निष्कर्ष के खिलाफ दिनांक 17.06.2014 को फिर से अपनी विरोध याचिका दायर की और सभी नामित अभियुक्तों के खिलाफ संज्ञान लेने की प्रार्थना की और उक्त विरोध याचिकाओं की प्रतियां अनुलग्नक-3 और अनुलग्नक-4 के रूप में दायर की गई हैं। इस

प्रकार, यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि पुलिस रिपोर्ट पर संज्ञान से संबंधित आक्षेपित आदेश पारित करने के समय, याचिकाकर्ता द्वारा दायर विरोध याचिका रिकॉर्ड पर थी, लेकिन उस पर विचार नहीं किया गया, जो कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विभिन्न निर्णयों में तय कानून का पूरी तरह से उल्लंघन है। अंत में यह प्रस्तुत किया गया है कि विपक्षी संख्या 2 से 11 को न भेजने के संबंध में पुलिस रिपोर्ट को स्वीकार करने से पहले, विद्वान दंडाधिकारी ने नोटिस की सेवा के माध्यम से याचिकाकर्ता की उपस्थिति प्राप्त करके सुनवाई का अवसर देने के लिए कोई कष्ट नहीं उठाया और इस संबंध में, आक्षेपित आदेश का अवलोकन किया जा सकता है, जो कि कानून की तय स्थिति का भी उल्लंघन है।

4. उपरोक्त दलीलों के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

(i) भगवंत सिंह बनाम पुलिस आयुक्त एवं अन्य (1985) 2 एससीसी 537 में रिपोर्ट किया गया और प्रासंगिक पैराग्राफ नं. धारा 4 जिस पर भरोसा किया गया है, उसे इस प्रकार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:-

> "4. अब, जब धारा 173 की उपधारा (2)(i) के अंतर्गत पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी द्वारा दंडाधिकारी को भेजी गई रिपोर्ट दंडाधिकारी के विचारार्थ आती है, तो दो भिन्न स्थितियों में से एक उत्पन्न हो सकती है। रिपोर्ट यह निष्कर्ष निकाल सकती है कि किसी विशेष व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा कोई अपराध किया गया है और ऐसी स्थिति में दंडाधिकारी तीन में से कोई एक कार्य कर सकता है: (1) वह रिपोर्ट को स्वीकार कर सकता है और अपराध का संज्ञान लेकर आदेश जारी कर सकता है या (2) वह रिपोर्ट से असहमत हो सकता है और कार्यवाही रोक सकता है या (3) वह धारा 156 की उपधारा (3) के अंतर्गत आगे की जांच का निर्देश दे सकता है और पुलिस को आगे की रिपोर्ट बनाने के लिए कह सकता है। दूसरी ओर रिपोर्ट में यह कहा जा सकता

है कि पुलिस की राय में कोई अपराध नहीं किया गया है और जहां ऐसी रिपोर्ट की गई है, दंडाधिकारी ने फिर से कहा है कि वह रिपोर्ट स्वीकार करे और अपराध का संज्ञान लेकर आदेश जारी करे या (3) वह रिपोर्ट से असहमत हो सकता है और कार्यवाही रोक सकता है या (4) वह धारा 156 की उपधारा (3) के अंतर्गत आगे की जांच का निर्देश दे सकता है और पुलिस को आगे की रिपोर्ट बनाने के लिए कह सकता है। दूसरी ओर रिपोर्ट में यह कहा जा सकता है कि पुलिस की राय में कोई अपराध नहीं किया गया है और जहां ऐसी रिपोर्ट की गई है, दंडाधिकारी ने फिर से कहा है कि वह रिपोर्ट स्वीकार करे और अपराध का संज्ञान लेकर आदेश जारी करे या (4) वह रिपोर्ट स्वीकार करे और पुलिस को आगे की रिपोर्ट बनाने के लिए कह सकता है। तीन में से एक रास्ता अपनाने का विकल्पः (1) वह रिपोर्ट स्वीकार कर सकता है और कार्यवाही छोड़ सकता है या (2) वह रिपोर्ट से असहमत हो सकता है और यह मानते हुए कि आगे कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है, अपराध का संज्ञान ले सकता है और प्रक्रिया जारी कर सकता है या (3) वह धारा 156 की उपधारा (3) के तहत पुलिस द्वारा आगे की जांच करने का निर्देश दे सकता है। जहां, इन दोनों स्थितियों में से किसी में, दंडाधिकारी अपराध का संज्ञान लेने और प्रक्रिया जारी करने का फैसला करता है, सूचना देने वाले पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है और न ही घायल या मृत्यु के मामले में मृतक का कोई रिश्तेदार व्यथित होता है, क्योंकि अपराध का संज्ञान दंडाधिकारी द्वारा लिया जाता है और दंडाधिकारी द्वारा यह निर्णय लिया जाता है कि मामला आगे बढ़ेगा। लेकिन यदि दंडाधिकारी यह निर्णय लेता है कि आगे कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है और कार्यवाही को छोड़ देता है या यह विचार करता है कि यद्यपि कुछ के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है,

लेकिन प्रथम सूचना रिपोर्ट में उल्लिखित अन्य के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, तो सूचक निश्चित रूप से पक्षपाती होगा क्योंकि उसके द्वारा दर्ज की गई प्रथम सूचना रिपोर्ट अपने उद्देश्य में पूरी तरह या आंशिक रूप से विफल हो गई होगी। इसके अलावा, जब धारा 154 की उपधारा (2), धारा 157 की उपधारा (2) और धारा 173 की उपधारा (2) (ii) में निहित प्रावधानों द्वारा उसके द्वारा दर्ज की गई प्रथम सूचना रिपोर्ट पर त्वरित और प्रभावी कार्रवाई करने में सूचक का हित स्पष्ट रूप से मान्यता प्राप्त है, तो यह माना जाना चाहिए कि सूचक भी यह देखने में समान रूप से रुचि रखेगा कि दंडाधिकारी अपराध का संज्ञान लेता है और आदेश जारी करता है, क्योंकि यह उसके द्वारा दर्ज की गई प्रथम सूचना रिपोर्ट की परिणति होगी। अतः इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब धारा 173 की उपधारा (2)(i) के अन्तर्गत पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी द्वारा की गई रिपोर्ट पर विचार करने के पश्चात दंडाधिकारी अपराध का संज्ञान लेने तथा आदेशिका जारी करने के लिए इच्छुक नहीं है, तो सूचना देने वाले को सुनवाई का अवसर अवश्य दिया जाना चाहिए, ताकि वह दंडाधिकारी को अपराध का संज्ञान लेने तथा आदेशिका जारी करने के लिए राजी करने के लिए अपने निवेदन प्रस्तुत कर सके। तदनुसार हमारा यह मत है कि ऐसे मामले में, जहां दंडाधिकारी , जिसे धारा 173 की उपधारा (2)(i) के अन्तर्गत रिपोर्ट भेजी गई है, अपराध का संज्ञान न लेने तथा कार्यवाही समाप्त करने का निर्णय लेता है अथवा यह विचार करता है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट में उल्लिखित कुछ व्यक्तियों के विरूद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, तो दंडाधिकारी को सूचना देने वाले को नोटिस देना चाहिए तथा रिपोर्ट पर विचार करने के समय उसे सुनवाई का अवसर प्रदान करना चाहिए। प्रतिवादियों की ओर से हमारे समक्ष यह तर्क दिया गया कि

यदि ऐसे मामले में सूचना देने वाले को नोटिस देना आवश्यक है, तो सूचना देने वाले को नोटिस देने में कठिनाई के कारण अनावश्यक विलम्ब हो सकता है। लेकिन हम नहीं समझते कि इसे हमारे दृष्टिकोण के विरुद्ध वैध आपत्ति माना जा सकता है, क्योंकि किसी भी मामले में प्रथम सूचना रिपोर्ट पर पुलिस द्वारा की गई कार्रवाई की सूचना सूचना देने वाले को दी जानी चाहिए तथा धारा 173 की उपधारा (2) (i) के अन्तर्गत रिपोर्ट की एक प्रति उसे उपलब्ध कराई जानी चाहिए, और यदि ऐसा है, तो हमें कोई कारण नहीं दिखता कि सूचना देने वाले को रिपोर्ट पर विचार करने की सूचना देना कठिन क्यों होना चाहिए। इसके अलावा, किसी भी स्थिति में, सूचना देने वाले को नोटिस देने की कठिनाई, सूचना देने वाले को दंडाधिकारी द्वारा रिपोर्ट पर विचार किए जाने के समय सुनवाई के अवसर से वंचित करने का कोई औचित्य प्रदान नहीं कर सकती है। "

(ii) धर्म पाल एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य (2014) 3 एससीसी 306 में रिपोर्ट किया गया और संबंधित पैराग्राफ संख्या धारा 34 से 36 जिन पर भरोसा किया गया है, उन्हें निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:-

"**34.** *किशुन सिंह मामले [किशुन सिंह बनाम बिहार राज्य, (1993) 2 एससीसी 16: 1993 एससीसी (क्रि) 470]* में व्यक्त किया गया दृष्टिकोण, हमारे विचार में, अधिक स्वीकार्य है क्योंकि, जैसा कि इस न्यायालय ने पूर्व में संदर्भित मामलों में माना है, दंडाधिकारी के पास पुलिस अधिकारियों द्वारा संहिता की धारा 173(2) के तहत दायर की जा सकने वाली अंतिम रिपोर्ट से असहमत होने और पुलिस रिपोर्ट के अलावा अभियुक्तों के खिलाफ कार्यवाही करने की पर्याप्त शक्तियाँ हैं, जो शक्ति सत्र न्यायालय के पास धारा 319 चरण तक नहीं है। उक्त स्थिति का परिणाम यह होगा कि भले ही दंडाधिकारी के

पास संहिता की धारा 173(2) के तहत दायर पुलिस रिपोर्ट से असहमत होने की शक्तियाँ थीं, लेकिन वह इस तरह के निर्णय का सहारा लेने में असहाय था। सत्र न्यायाधीश भी अभियुक्त के अलावा किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करने में असमर्थ थे, जब तक कि साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किए गए थे और अभियुक्त की ओर से गवाहों से जिरह नहीं की गई थी।

35. हमारे विचार में, दंडाधिकारी को धारा 173(2) सीआरपीसी के तहत उनके समक्ष प्रस्तुत पुलिस रिपोर्ट पर संज्ञान लेने के बाद सत्र न्यायालय को मामला सौंपते समय भूमिका निभानी होती है। यदि दंडाधिकारी पुलिस रिपोर्ट से असहमत हैं, तो उनके पास दो विकल्प हैं। वह दायर की गई विरोध याचिका के आधार पर कार्रवाई कर सकते हैं, या वह पुलिस रिपोर्ट से असहमत होते हुए भी प्रक्रिया जारी कर सकते हैं और अभियुक्त को तलब कर सकते हैं। इसके बाद, यदि वह संतुष्ट हो जाता है कि रिपोर्ट के कॉलम 2 में नामित व्यक्तियों के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए मामला बनाया गया है, तो उक्त व्यक्तियों पर मुकदमा चलाने के लिए आगे बढ़ें या यदि वह संतुष्ट हो जाता है कि एक मामला बनाया गया है जो सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय है, तो वह मामले में आगे की कार्यवाही करने के लिए मामले को सत्र न्यायालय को सौंप सकता है।

36. यह हमें तीसरे प्रश्न पर लाता है कि दंडाधिकारी द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के बारे में यदि वह संतुष्ट हो जाता है कि पुलिस द्वारा प्रस्तुत अंतिम रिपोर्ट के बावजूद प्रथम दृष्टया मामला परीक्षण के लिए जाने के लिए बनाया गया है। ऐसी स्थिति में, यदि दंडाधिकारी ने अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ आगे बढ़ने का फैसला किया, तो उसे पुलिस रिपोर्ट के आधार पर ही आगे बढ़ना होगा और या तो मामले की जांच करनी होगी या यदि सत्र

न्यायालय द्वारा इसे विचारणीय पाया जाता है तो इसे सत्र न्यायालय को सौंपना होगा। "

(iii) विष्णु कुमार तिवारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य सचिव गृह सिविल सचिवालय लखनऊ और अन्य के माध्यम से (2019) 8 एससीसी 27 में रिपोर्ट की गई और संबंधित पैराग्राफ संख्या 27 और 43, जिस पर भरोसा किया गया है, को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:-

"**27.** यह निस्संदेह सत्य है कि दंडाधिकारी द्वारा धारा 173 के तहत अंतिम रिपोर्ट स्वीकार करने और अभियुक्त को दोषमुक्त करने से पहले, दंडाधिकारी पर यह दायित्व है कि वह विरोध याचिका की सामग्री पर अपना दिमाग लगाएं और उसके बाद निष्कर्ष पर पहुंचे। जबकि जांच अधिकारी अंतिम रिपोर्ट पेश करके संतुष्ट हो सकता है, जो उसके अनुसार उसके प्रयासों की परिणति है, दंडाधिकारी का कर्तव्य अंतिम रिपोर्ट को आसानी से स्वीकार करने तक सीमित नहीं है। यह उस पर निर्भर करता है कि वह सामग्री का अध्ययन करे, तथा शिकायतकर्ता की सुनवाई करने और विरोध याचिका की विषय-वस्तु पर विचार करने के पश्चात, अंततः आगे की कार्रवाई के बारे में निर्णय ले, कि मामले को जारी रखा जाए या पर्दा डाल दिया जाए।

43. यह सही है कि कानून के अनुसार, जहां दंडाधिकारी अंतिम रिपोर्ट स्वीकार करने का विचार करता है, वहां सूचनाकर्ता/शिकायतकर्ता को नोटिस देना अनिवार्य है। नोटिस प्राप्त होने पर, सूचनाकर्ता अंतिम रिपोर्ट पर अपनी आपत्तियों को व्यक्त करते हुए न्यायालय को संबोधित कर सकता है। ऐसा वह आमतौर पर विरोध याचिका के रूप में करता है। *महाबीर प्रसाद अग्रवाल बनाम राज्य* [*महाबीर प्रसाद अग्रवाल बनाम राज्य*, 1957 एससीसी ऑनलाइन ओरी 5: एआईआर 1958 ओरी 11] में, उड़ीसा उच्च न्यायालय के एक विद्वान

न्यायाधीश ने यह विचार व्यक्त किया कि विरोध याचिका एक शिकायत की प्रकृति की होती है और दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XVI के प्रावधानों के अनुसार इसकी जांच की जानी चाहिए। हमने, हालांकि, यह भी देखा कि *कासिम बनाम राज्य* [*कासिम बनाम राज्य*, 1984 एससीसी ऑनलाइन सभी 260: 1984 क्रि एलजे 1677] में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने, अन्य बातों के साथ-साथ, इस प्रकार माना: (*कासिम मामला* [*कासिम बनाम राज्य*, 1984 एससीसी ऑनलाइन सभी 260: 1984 क्रि एलजे 1677], एससीसी ऑनलाइन सभी पैरा 6)

"6. ... अभिनंदन झा [अभिनंदन झा बनाम दिनेश मिश्रा, एआईआर 1968 एससी 117: 1968 क्रि एलजे 97: (1967) 3 एससीआर 668] में भी यह देखा गया था कि "यह बहुत स्पष्ट नहीं है कि दंडाधिकारी ने विरोध याचिका को शिकायत के रूप में माना है या नहीं"। इस अवलोकन का मतलब यह नहीं होगा कि हर विरोध याचिका को अनिवार्य रूप से शिकायत के रूप में माना जाना चाहिए चाहे वह शिकायत की शर्तों को पूरा करती हो या नहीं। एक निजी कंपनी शिकायत में उन गवाहों की पूरी सूची होनी चाहिए जिनकी जांच की जानी है। शिकायतकर्ता की आगे की जांच धारा 200 सीआरपीसी के तहत की जाती है। यदि दंडाधिकारी ने विरोध याचिका को शिकायत के रूप में नहीं माना, तो विरोध याचिका उनके विचार में शिकायत की सभी शर्तों को पूरा नहीं करती है, इसका मतलब यह नहीं होगा कि मामला शिकायत का मामला बन गया है। वास्तव में, अधिकांश मामलों में जब अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है, तो दंडाधिकारी को केवल यह विचार करना होता है कि केस डायरी में सामग्री के आधार पर अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार करने के लिए कोई मामला नहीं बनता है या क्या केस डायरी संज्ञान लेने के लिए प्रथम

दृष्टया मामला बताती है। ऐसी स्थिति में विरोध याचिका केवल केस डायरी में सामग्री की ओर दंडाधिकारी का ध्यान आकर्षित करने और दंडाधिकारी द्वारा सावधानीपूर्वक जांच और दिमाग का प्रयोग करने के उद्देश्य से काम करती है, इसलिए यह नहीं माना जा सकता है कि केवल इसलिए कि एक विरोध याचिका है, मामला शिकायत का मामला बन जाता है। ”

(iv) अमीश देवगन बनाम भारत संघ और अन्य (2021) 1 एससीसी 1 और प्रासंगिक पैराग्राफ संख्या में रिपोर्ट किया गया। 124

जिस पर भरोसा किया गया है, उसे इस प्रकार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:-

“**124.** यह अन्य शिकायतकर्ताओं के लिए उचित और न्यायसंगत होगा, जिनके कहने पर अन्य प्राथमिकी दर्ज की गई थीं, क्योंकि वे पुलिस द्वारा क्लोजर/फाइनल रिपोर्ट दाखिल किए जाने की स्थिति में विरोध याचिका दायर करने की स्थिति में होंगे। ऐसी विरोध याचिका दायर करने पर, दंडाधिकारी उनके तर्कों पर विचार करने के लिए बाध्य होगा, और क्लोजर/फाइनल रिपोर्ट को अस्वीकार भी कर सकता है और अपराध का संज्ञान ले सकता है और आरोपी को समन जारी कर सकता है। अन्यथा, ऐसे शिकायतकर्ताओं को दंडाधिकारी के समक्ष क्लोजर रिपोर्ट का विरोध करने में कठिनाई का सामना करना पड़ेगा, भले ही अपराध के मामले को साबित करने के लिए पर्याप्त सामग्री मौजूद हो। ”

5. दूसरी ओर, विपक्षी संख्या 2 से 11 के लिए उपस्थित विद्वान वकील श्री हंस राज ने प्रस्तुत किया कि सीआरपीसी की धारा 190 (1) के अनुसार, संज्ञान लेने की दंडाधिकारी की शक्ति पूरी तरह से विवेकाधीन है और विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा आदेश पारित करते समय इसका सही ढंग से प्रयोग किया गया है, यदि याचिकाकर्ता को कोई शिकायत है तो उसे सीआरपीसी की धारा 319 के तहत विचारण न्यायालय के समक्ष अपनी

शिकायत करने का पर्याप्त अवसर मिलेगा, यदि अभियोजन पक्ष के साक्ष्यों से विपक्षी के खिलाफ पर्याप्त और मजबूत सबूत सामने आते हैं, जो उन्हें कथित घटना के कमीशन में शामिल होने को दर्शाते हैं। उन्होंने आगे कहा कि विपक्षी घटनास्थल पर मौजूद नहीं थे और उन्हें दुर्भावनापूर्ण इरादे से आरोपी बनाया गया था और जांच के दौरान, सभी स्वतंत्र गवाहों ने कहा कि विपक्षी घटनास्थल पर मौजूद नहीं थे जब कथित तौर पर अपराध किए गए थे और इसके अलावा, कथित घटना में विपक्षी की भागीदारी के संबंध में, जांच अधिकारी ने विपक्षी के मोबाइल टॉवर स्थान से संबंधित तकनीकी साक्ष्य के आधार पर मामले की जांच की, जो विपक्षी के पक्ष में जाती है और इस संबंध में केस डायरी में पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है।

6. दोनों पक्षों को सुना गया, आक्षेपित आदेश और अन्य प्रासंगिक सामग्रियों का अवलोकन किया गया। वर्तमान मामला गंभीर अपराधों से संबंधित है और प्राथमिकी में विपक्षी संख्या 2 से 11 का नाम दर्ज है और पुलिस ने केवल कुछ व्यक्तियों के बयानों पर विश्वास करके विपक्षी को नहीं भेजा, जिन्हें स्वतंत्र व्यक्ति कहा जाता है, लेकिन दूसरी ओर, जिन महत्वपूर्ण गवाहों का विवरण प्राथमिकी में उल्लेख किया गया है, उन्होंने प्राथमिकी में विपक्षी के खिलाफ सुचक द्वारा लगाए गए आरोपों का समर्थन किया। बेशक, सुचक ने दो विरोध याचिकाएँ दायर की थीं, पहली जांच के दौरान और दूसरी पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद और यह कानून की एक स्थापित स्थिति है कि ऐसी विरोध याचिका दायर करने पर, दंडाधिकारी सुचक द्वारा अपनी विरोध याचिका में उठाए गए तर्कों और दलीलों पर विचार करने के लिए बाध्य होगा। ऐसी विरोध याचिका पर, दंडाधिकारी या तो इसे खारिज कर सकता है या इसे शिकायत के रूप में मानते हुए आगे बढ़ सकता है या किसी ऐसे आरोपी के संबंध में केस डायरी में उपलब्ध सामग्री के आधार पर संज्ञान ले सकता है जिसे भेजा नहीं गया है या फिर दोबारा जांच का आदेश पारित किया जा सकता है लेकिन इस मामले में एक बात बिल्कुल स्पष्ट है कि विद्वान दंडाधिकारी ने विपक्षी संख्या 2 से 11 के संबंध में पुलिस

रिपोर्ट को स्वीकार करते समय याचिकाकर्ता द्वारा दायर विरोध याचिका को ध्यान में नहीं रखा और आक्षेपित आदेश से यह भी प्रतीत नहीं होता है कि विद्वान दंडाधिकारी द्वारा विपक्षी संख्या 2 से 11 को न भेजने के पुलिस निष्कर्ष के बारे में सूचना देने का कोई प्रयास नहीं किया गया और दंडाधिकारी का उक्त दृष्टिकोण माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त उद्धृत निर्णयों में निर्धारित उपर्युक्त सिद्धांतों का पूरी तरह से उल्लंघन है। अतः मुख्य रूप से इस पहलू पर विचार करते हुए, यह न्यायालय, विपक्षी संख्या 2 से 11 के संबंध में आक्षेपित आदेश को विधि सम्मत नहीं पाता है, अतः इसे केवल विपक्षी संख्या 2 से 11 की सीमा तक ही निरस्त किया जाता है तथा विद्वान दंडाधिकारी को निर्देश दिया जाता है कि वे याचिकाकर्ता को उसकी विरोध याचिका पर सुनवाई का पर्याप्त अवसर प्रदान करने के पश्चात उक्त विपक्षी के संबंध में पुनः आदेश पारित करें तथा उसके पश्चात, विपक्षी संख्या 2 से 11 के संबंध में संज्ञान के बिंदु पर, इस आदेश से किसी भी प्रकार का पूर्वाग्रह न रखते हुए, गुण-दोष के अनुसार निर्णय लेवें तथा मजिस्ट्रेट को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में आगे बढ़ें।

7. परिणामस्वरूप, वर्तमान याचिका स्वीकृत की जाती है।

(शैलेंद्र सिंह, न्यायमूर्ति)

मेनाज/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।